Research Paper Arts

Bundelkhand ka Lok Natya ‘Swang’: Ek Parichay

बुन्देलखण्ड का लोक नाट्य ‘स्वांग’: एक परिचय

Himanshu Dvivedi

Research Scholar, M. A Theater, URF, UGC NET, CSNA Fellowship,University, Chandigarh,160014

ABSTRACT

iLrqr ‘kk/k i=k cqUnsy[k.M ds yksd ukV~; Lokax ij vk/kfjr gSA ftl rjg lepw Hkkjr dh laLd`fr dk fodkl gksrk jgk mlh Øe esa {ks=kh; laLd`fr viuh ixfr esa vxzlj gksrh jghA blh rjg cqUnsy[k.M Hkh fdlh {ks=k fo’ks”k ls ihNs ugha jgk vkSj viuh xkSjo’kkyh ijEijkvksa dks vkxs c<+krk jgkA yksd ukV~; dh feyh tkudkjh ds vuqlkj ,dek=k Lokax gh ,slk yksd ukV~; gS tks lepw cqUnsy[k.M dh turk esa lokZf/kd izpfyr ,oa tufiz; jgkA tks iz;% vapy ds gj xkao dLcs esa jkbZ uR; ds chp esa dykdkjksa dks foJke nsus ds fy, fd;k tkrk gSA ftlesa vfHkus; i¼fr fo’ks”k vk’kqvfHkUk; iz/ku gksrh gSA tks ‘kknh fookg tUekRlo ij inf’kZr gksrk gS rFkk iR;sd [kq’kh ds volj ij fd;k tkrk gS blsa {ks=kh;rk ds vuq:i vyx ukeksa ls Hkh tkuk tkrk gSA

KEYWORDS

स्वांग लोक नाट्य की सम्पूर्ण विधा का प्रतिनिधि शब्द है। मूलतः स्वांग किसी भी ऐसे प्रदर्शन को कहा जाता है जहां जनता को जोड़कर किसी कथानक को किसी भी रूप में खेलकर मनोरंजन किया जाता है या कोई नकल आदि की जाये। बाद में स्वांग लोक नाट्य के लिए प्रयुक्त होने लगा अब किसी भी ऐसे लोक नाट्य को स्वांग कहा जाता है। जिसमें कोई पात्र किसी अन्य व्यक्ति का रूप धारण करके कोई प्रदर्शन करे। संस्कृत साहित्य में जैसे रूपक शब्द प्रत्येक मंचीय प्रदर्शन के लिए प्रयुक्त होता रहा है और उसके अनेक भेद व उपभेद हुए हैं। ठीक उसी प्रकार स्वांग शब्द सभी लोक नाटकों के लिए प्रयुक्त होता रहा है, संस्कृत के लिए लक्ष्य गद्यो में नाटक यद्यपि रूपक का एक भेद माना गया है जो एक विशिष्ट प्रकार के रूपक का ही द्योतक है परंतु आज हिन्दी जगत में नाटक का अर्थ व्यापक होकर संस्कृत के रूपक शब्द का पर्यायवाची हो गया है आज हम जिस तरह प्रत्येक मंचीय प्रदर्शन को नाटक कह देते हैं ठीक उसी अर्थ में लोक जीवन में प्रत्येक लोक नाटक को स्वांग कहा जा सकता है। हां लोक नाट्य के वे रूप जिनके साथ धार्मिकता जुड़ी है। अवश्य स्वांग नहीं कहे जाते उदा० -रामलीला, रासलीला को स्वांग नहीं कहा जाता, परंतु शेष लोकानुरंजन करने वाले और लौकिक कथानकों पर आधारित सभी लोक नाटय स्वांग नहीं हैं स्वांग शब्द का महत्व इस दृष्टि से और अधिक है कि शब्द लोक रंगमंचीय विधा के लिये तो रूढ़ ही हो गया है।

स्वांग शब्द का अर्थ और विकास: -

व्यापक रूप में स्वांग का अर्थ है। रूप रखना, वेश बनाना, नकल करना आदि। पं० रामशंकर शुक्ल ने स्वांग के लिए एक ग्रामीण शब्द सुरांग दिया है जो ‘‘सु+रांग’’ अर्थात सुंदर रंग या सुन+ आगिक से बना होगा कुछ लोक स्वांग का प्रयोग नाटक के लिए करते हैं पर स्वांग लोक नाट्य का पर्याय नहीं है पर एक विशिष्ट लोक नाट्य के अर्थ में लोकप्रिय होने पर उसमें अर्थ व्याप्ति आ गई है असल में स्वांग लोक नाट्य अत्यंत जनप्रिय रहा है इसीलिए वह लोक में व्यापक अर्थ वहन करने में सफल हुआ है।

बुन्देली स्वांग का उद्भव अनुभावानुसार- आठवीं नौवीं सदी के लोक-चेतना के उत्थान-क. ाल में उसका प्रस्फुलन हुआ था। इस काल में प्रतिहारों चंदेलों को उनके अनेक जनजातियों से संघर्ष करना पड़ा था। जिससे प्रतीत होता है कि नौवीं सदी तक इस प्रदेश में अधिकतर जनजातियों का स्वामित्व था और उनका मनोरंजन यथा-वार्ता, लोक नृत्य एवं लोक नाट्य आदि थे, दसवीं सदी के खुजराहों के मंदिर ग्यारवीं सदी के प्रबोध चंद्रोदय की रंग स्थली महोबा के मदन सागर के बीच पड़े रंगशाला के अवशिष्ट और बारहवीं सदी के लोक गा. थात्मक महाकाव्य आल्हाखण्ड से यह निष्कर्ष निकलता है कि बुन्देलखण्ड में लोक चेतना, लोक साहित्य, लोक नाट्य का उद्भव इसी समय हुआ था। मध्यकाल के अनेक ग्रंथों में इसके उत्पादन का पता चलता है आधुनिक युग में स्वांग पर विशेष ध्यान नहीं दिया जा रहा है। लेकिन इतना अवश्य है कि स्वांग में ही आधुनिक समाज चेतना, उसकी अनुभूतियों और व्यंजना पुष्ट अभिव्यक्तियों को अपने में समेट लेने की पूरी क्षमता है।

स्वांग की व्यापकता: -

आज लोक जीवन में स्वांग का अर्थ और भी व्यापक हो गया है। अब लोक जीवन से संबंध ऐसे प्रदर्शन भी जो बिना मंच के भी हो पाते हैं स्वांग ही कहते हैं उदाहरण के लिए विवाह के अवसर पर बारात के चले जाने के उपरांत रात्रि में वर पक्ष की नारियां घर पर खोइयां या बाबा के नाम से जो प्रदर्शन करती हैं उसे भी स्वांग ही कहा जाता है। मांगलिक अवसर पर धोबी, चमार, कुम्हार, मेहतर आदि जातियों के लोग आपस में ढोलक मंजीरों पर रंग बिरंगे कपड़े पहनकर मन की मौज मे जो प्रदर्शन करते हैं, नाचते गाते हैं उन्हें भी स्वांग कहते हैं। बुन्देलखण्ड में छोटे बच्चे (लड़के-लड़कियां) खिलोने से विवाह आदि का अभिनय करते हैं उन्हें भी स्वांग कहते हैं। घरघूला, गुड्डा, गुड़ियों का विवाह और नौरता उत्सवों के अवसर पर ठेलों पर या ट्रकों में जो झांकी संजाई जाती है उन्हें भी पहले स्वांग ही कहते थे। जिन्हें अब झांकी के नाम से जाना जाता है अब भी स्वांग लोक नाटक सभी रूपों के लिए प्रचलित सर्वाधिक लोकप्रिय शब्द है स्वांग शब्द जहां गेय लोक नाटकों के लिए प्रयुक्त किया जाता है वहीं दूसरी और लोकधर्म परम्परा के नाटकों को भी स्वांग ही कहा जाता है। हमारे प्राचीन कवियों ने भी यथा स्थान अपने काव्यों में स्वांग शब्द का इसी रूप में उल्लेख किया है।

बुन्देलखण्ड का स्वांग जो कि राई के मध्य में होता है, राई तो श्रृंगारिक गीतों से सजती है जिन्हें ख्याल कहते हैं पर स्वांग सदैव युग सापेक्ष होता है लोक जीवन को सरस रखने के उद्देश्य से हास्य का आयोजन स्वांग के माध्यम से होता है स्वांगीय विधि प्रतिभा के व्यक्ति होते हैं व दर्शकों को वाकपटुता, पारिवारिक वर्तालाप, और अभिन्य से ऐसी संवेदना जागृत करते हैं जो सामाजिक विरूपता के दूर करने के साथ एक जीवन दृष्टि विकसित करने में सहायक होती है स्वांग हमारे सांस्कृतिक जीवन की ऐसी कसौटी है जिसमें समयानुसार परिवर्तन और नवीनता का आग्रह होता है।

पुराने लोगों के अनुसार ललितपुर टीकमगढ़ के पास के गांव में लगभग 60-70 वर्ष पहले गोवर्धन नाम का एक व्यक्ति व उसके साथी का एक स्वांग दल था। ऐसा सुनने में आता है कि वह व्यक्ति एक चलता फिरता स्वांग था समाज की फैली बुराई को वह स्वांग के रूप में जनता के समक्ष प्रस्तुत करता था।

बुन्देली स्वांग के विभिन्न प्रकार एवं वर्गीकरण: -

1. व्याव के स्वांग: -

बुन्देलखण्ड ने सर्वाधिक ख्याति व्याव के स्वांग की ही है जो वधु पक्ष के घर बरात जाने पर वर पक्ष की स्त्रियों द्वारा किये जाते हैं जिन्हें बाबाबाई कहते हैं। इन स्वांगों में अश्लीलता का पुट होता है। इन स्वांगों की भाषा बुन्देली ही होती है ये स्वांग कई प्रकार के होते हैं- (अ.) संस्कार संबंधी-सगनौती का स्वांग

(ब.) विनोदपूरक स्वांग-नाईजू का स्वांग या बेरी का स्वांग
(स.) व्यंग प्रधान-दहेज का स्वांग
(द.) श्रृंगार पूरक-बाबा के स्वांग जिसमें दाम्पत्य जीवन के सम्भोग तक का चित्रण होता है।
(य.) भक्ति पूरक स्वांग-माखन चोरी का स्वांग
(र.) अन्य स्वांग-कुजरा कुजरिया का स्वांग, ताना-बाना का स्वांग आदि।

2. त्योहारों उत्सवों के स्वांग: -

होली जन्माष्टमी पर स्वांगों का प्रचलन आज भी होता है। होली में गधे की सवारी, उल्टी खाट, राधाकृष्ण की नाम परिया टूटने का स्वांग आदि हास्य विनोद की दृष्टि से होते हैं। जन्माष्टमी पर धधकानों का स्वांग बहुत प्रसिद्ध है।

इन स्वांगों में सबसे अलग किन्तु बहुत महत्वपूर्ण स्वांग ‘‘कजरिया छैंकबे को स्वांग है जो सावन की पूर्णिमा या परमा को होता है। यह स्वांग राठ में और सजीव हो उठता है जब पुरुष पात्र ही चंद्रावली, आल्हा-उदल, लाखन, पृथ्वीराज चौहान के वंश में अभिनय करते हैं। विशेषतया यह है कि बारहवीं सदी की इस ऐतिहासिक घटना को लोक ने स्वांग में ढाल लिया है। इससे स्पष्ट है कि स्वांगों में उस ऐतिहासिक चेतना को आत्मसात करने की अद्भुत शक्ति होती है जो लोक चेतना का सचेत अंग बन जाती है।

3. जातियों के स्वांग: -

इस अंचल की विभिन्न जातियों जैसे-भंगी, धोबी, कुरमी चमार आदि का स्वांग जाति विशेष के द्वारा विविध अवसरो पर किये जाते हैं। इसमें पुरुष व स्त्री पात्र दोनों ही होते हैं।

4. पेशेवर स्वांग: -

मध्य युग में पेशेवर स्वांग मंडलियों का उद्भव हुआ था। जो घूम-घूम कर स्वांगों का प्रदर्शन करती थीं। बहरूपियों के स्वांग को अभी भी देखने को मिल जाते हैं। पतुरियों के स्वांग उनके गीत और मृत्यु के साथ प्रचलित रहे हैं। अधिकांशतः उत्सवों, शादियों, जुलूसों में पेशेवर स्वांग होते रहे हैं। स्वांग का इतना प्रभाव था कि प्रसिद्ध लोक नृत्य राई भी उनकी गिरफ्त में आ गया इसका तात्पर्य यह है।

स्वांग के प्रमुख तत्त्व और उनका वैशिष्ट्य:-

बुन्देली स्वांग में सभी नाट्य तत्त्व मौजूद हैं उनकी विषय-वस्तु में विविधता है कुछ पौराणिक या धार्मिक हैं तो कुछ ऐतिहासिक या राजनैतिक पुराने ऐतिहासिक व राजनैतिक नहीं के बराबर हैं किन्तु अब राजनैतिक स्वांगों की और अधिक झुकाव हो गया है वैसे स्वांगों की मुख्य विषय वस्तु सामाजिक जीवन व मनोरंजन है उसमें जीवन की यथापूरक और वास्तविक अनुभूतियों का प्रतिबिम्बन बना हुआ है। इसलिए स्वांगों में आधुनिक संदर्भों से जुड़ने की शक्ति विद्यमान है। इस विशेषता के बावजूद बुन्देली स्वांगों में किसी अनुभव की पूर्णता नहीं मिलती वरन उनका खण्ड चित्र ही थोड़ी देर के लिए चमत्कृत करता है। लेकिन बुन्देली स्वांग की प्रमुख प्रवृति कथा मूलक न होकर व्यंगात्मक है। सामाजिक विषमताओं, कुरीतियों, आंड. बरों आदि पर जितनी तीखी चोट बुन्देली स्वांग करते हैं उतनी अन्य बोलियों के स्वांग नहीं। बुन्देली स्वांग के पात्रों की संख्या बहुत कम होती है। एक पात्र अनेक पात्रों का अभिनय करता है। उनमें इतना कौशल होता है कि वह हर भूमिका को बहुत ही अच्छे तरीके से कर लेता है। स्त्री तक पाठ करने में उन्हें कोई संकोच नहीं होता।

संवाद छोटे, सरल और सहज होते हैं। उनकी भाषा सहज सीधी होती है। जिसे आम आदमी समझ सकता है। बुन्देली भाषा का स्वरूप गद्य और पद्य दोनों में दिखाई पड़ता है। गद्य की भाषा जहां तीखी चुटीली और व्यंजनामयी होती है वहीं पद्य की भाषा सरल, मधुर होती है।

कृष्ण-

हमारी राधा प्यारी चंदा सी उजियारी
सूरज कैसी जोत, मोतिन कैसी पोत
कणेंर कैसी डार लप-लप, दूनर हो जाय।
सोरा सिंगार करे, बारा आभूषण पैनें।
फूलन से तुलन वारी, नैंनूं कैसो लोंदा तुमने कऊं देखी।

(राधा किसन का स्वांग)

बुन्देली स्वांगों में गीत, नृत्य और अभिनय की त्रिवेणी बहती है। वास्तव में बुन्देली स्वांग अभिनय प्रधान है। गीत और नृत्य बीच-बीच में गुथें रहते हैं जैसे विच्छू का स्वांग जिसमें एक लम्बा गीत होता, जिस पर अभिनेत्री नृत्य करती है। विच्छू चड़ जाने पर उस भाव की पूरी अभिव्यक्ति नृत्य के माध्यम से होती है। स्वांगों में अभिनय की परिपक्वता नहीं होती और न उनके लिए कोई तालीम या अभ्यास का प्रयत्न किया जाता है आंगिक और वाचिक अभिनय ही मुख्यत: प्रयुक्त होते हैं आहार्य पर कम ध्यान दिया जाता है। सात्विक के लिए कोई स्थान नहीं। वस्तुत: अभिनय की सहजता ही उनकी विशेषता है। संकेतों द्वारा अभिनय से और भी सहजता आ जाती है समग्र रूप में बुन्देली स्वांगों में अभिनय गीत और नृत्य का ऐसा मेल दिखाई देता है जो उन्हें विशुद्ध स्वांगों के रूप में प्रतिष्ठित कर देता है और वे नाटक पहले हैं गीत संगीत और नृत्य बाद में।

रंगमंच की दृष्टि से बुन्देली स्वांग और भी सहज है व्याव के स्वांगों में रंगमंच घर का आंगन होता है। उसी में विधीवत फर्श-दरी, चादर, चटाई आदि बिछा दी जाती है पेशेवर और लोकोत्सव के स्वांगों में खुला मंच, ऊंचा चबूतरा, ऊंची जमीन या तख्त होता है परदों का प्रयोग नहीं किया जाता है केवल पर्याप्त प्रकाश की व्यवस्था जरूरी होती है। जो पहले लालटेन या मशाल से की जाती थी और वर्तमान में हैलोजन, ट्यूबलाईट या 200-200 बाट के बल्ब लगा कर की जाती है। स्वांग में साधारण वेशभूषा होती है। सामान्य पदार्थ, रोली, सिंदूर, चिलकनी आदि से वेशभूषा तैयार की जाती है। वाद्यो में हर प्रकार के स्वांग में लोक वाद्यों का प्रयोग होता आया है जिसका अनुसरण बहुत थोड़े परिवर्तन से आज तक चला आ रहा है मुख्य रूप से स्वांग में ढोलक, चिमटा, नगड़िया और लोटा ही रहता है।

स्वांग की अलग पहचान:-

बुन्देली स्वांगों अन्य जनपदों स्वागों से भिन्न अपनी एक खास पहचान रखने के कारण महत्त्व का अधिकारी है। वह वृज के भगत की तरह संगीत प्रधान राजस्थान के ख्याल स्वांगों और गुजरात के भवाई वेश की तरह नृत्य प्रधान तथा हरियाणा के सांग की तरह गीत प्रधान नहीं है वरन हिमाचल के करियाला और कश्मीर के भांड पाथेर की तरह अभिनय प्रधान है। करियाला में व्यंगों का वैभव वैविल्य नहीं जो बुन्देली स्वांगों में है और भांड पाथेर के व्यंग अंत में आदर्श परक हो जाने के कारण अपनी यथार्थता खो देते हैं। तात्पर्य यह है कि बुन्देली स्वांग अपनी अभिनय मूल वक्ता और यथार्थता परक व्यंगात्मकता के आधार पर विशुद्ध स्वांग की प्रतिष्ठा रखता है और इसी खास पहचान की वजह से अन्य जनपदों के स्वांगों लोक नाट्यों के बीच उसका व्यक्तित्व सदैव स्मरणीय रहेगा।

लोक नाट्य के मूल में नृत्य, संगीत तथा स्वांग की प्रधानता होती है भारतीय लोक नाट्य अपने पुरातन स्वरूप और परम्पराओं के लिए हुए विभिन्न प्रदेशों में भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है जिन लोक नाटयों में जन मन रंजन की प्रवृत्तियां जितनी अधिक प्रगाड़ होती हैं वे नाट्य लोक जीवन में उतने ही खरे उतरते हैं। लोक गरिमा व लोक जीवन से अनुप्राणित ये लोक नाट्य शास्त्रीय रंगमंच से हटकर बंधनों से परे अभिव्यक्ति के स्वतंत्र आकाश में विचरण करते हैं, भारतीय नाट्य साहित्यकार मूल लोक नाट्य है। विविध उत्सवों, मेलों, पर्व, त्योहारों, अनुष्ठानों धार्मिक संस्कारों तथा रूढ़ियों परम्पराओं पर लोक जीवन अपने उल्लास व बहुरंगी कल्पनाओं में नृत्य और संगीत को माध्यम से जीवन की परिपूर्णता पाता है। जो लोक नाट्य के रूप में जन मनोरंजन की कल्पनाओं को साकार रूप देता है। लोक विश्वास, रूढ़ियों व मान्यताऐं इन लोक नाट्यों को सबलता प्रदान करते हैं।

बुन्देली स्वांगों में आज के बदलते जीवन और उसके अनुभवों से जुड़ने की अपार शक्ति है। उनमें वह तत्व मौजूद है जो गांव व शहर के जलवायु तथा नई हवाओं के स्पंदनों को समेट सकती हैं। इसलिए स्वांगकारों को आधुनिक जीवन की विभिन्न समस्याओं और बदलते मूल्यों को ध्यान में रखकर स्वागों का विकास करना चाहिए। लोकोत्सवों व जुलूसों के स्वांगों ने इस नई चेतना को सावधानी से पकड़ा है और इस सम्भावना की तरफ सचेत किया है। दूसरा पक्ष यह भी है कि गांव की प्रगति और जागृति के लिए इन स्वांगों के माध्यम को समुचित प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए लेकिन स्वांगों की इस विकास मूलक स्थिति में एकन्दपरक द्विविधापरक पड़ाव आ सकता है एक तरफ स्वांगों की मध्यकालीन भावुकता और संस्कार जन्म मूल्य है तो दूसरी तरफ आधुनिक वैद्धिकता और परिवर्तन मानों से सम्बद्धता का प्रश्न है। ऐसे पसोपेश में यह सार्थकता जरूरी है कि कहीं स्वांग की अस्मिता ही खतरे में न पड़ जाए। स्वांगियों को बदले माहोल और आधुनिक रंगकर्म के प्रति सजग रहना ही चाहिये। क्योंकि सचेतना में स्वांगों की संजीवनी शक्ति छिपी है।

REFERENCES

1- frokjh] Mk- cyHkn` jkbZ ,o Lokx] eè;in'k tulid foHkkx] Hkkiky] 2010 2- ik.M;] Mk- ,- d-% cUnsy[k.M dh ykd ijEijk] jktdh; lxgky;] >kalh] 2008 | 3- fujx.k] olr% eè;in'k dk ykduR;] eè;in'k tulid] Hkkiky 2010 4- f=ikBh] jk/k oYyHk% eè; in'k dk jxep] tulid foHkkx] Hkkiky 2010 5- vxoky] jkeukjk;.k% lkxhr ,d ykd ukV; ijijk] jktiky ,.M lUt fnYyh 1976 6- okRL;k;u] dfiyk% ikjifjd Hkkjrh; jxep] u'uy cqdVLV ubZ fnYyh 1995 7- vk>k] Mk° ek/krk% ukVd&ukV; fpru ,o jxx i;kx] dykefnj] fnYyh 2003 8- frokjh] ik- cyHkn% cUnyh lekt vkj lLdfr] cUnyh ihB] Mk- gfjflg xkj fo- fo- lkxj&1995 9- xIr] ik- ueznk ilkn% cUnyh ykd lkfgR;] ijEijk vkj bfrgkl] eè;in'k vkfnoklh ykd dykifj"kn] Hkkiky] 2001 10- no] Mk- ';ke% Lokx dh cUnyh ijEijk] cUnyh vpu if=kdk] cUnyh ykd lLdfr ykd lok ep] nekg] 2010 11- oktis;h] Mk- Jherh xk;=kh% cUnyh ykd ukV; Lokx] cUnyh njlu if=kdk] uxj ikfydk ifj"kn] nekg |